(2) गुण (Quality)

गुण वैशेषिक-दर्शन का दूसरा पदार्थ है। गुण द्रव्य में निवास करता है तथा यह गुण से शून्य है। इसलिए गुण को अकेला नहीं पाया जा सकता। इस प्रकार से "गुण वह पदार्थ है जो द्रव्य में ही रहता है, पर जिसमें और कोई गुण या कर्म नहीं रहता"। बिना किसी द्रव्य के (रूप, रस, गंध) गुण नहीं रह सकते। इसलिए इन्हें गुण (अर्थात् पर निर्भर, परतंत्र) कहते हैं। यह देखा गया है कि द्रव्य ही किसी कार्य के उपादान या समवायी कारण हो सकता है। केवल गौण रूप से उपादान में रहकर कार्य के होने में सहायक हो सकता है। अतः गुण केवल असमवायी कारण ही हो सकता है। सभी गुण द्रव्याश्रित होते हैं। जैसे- किसी वस्तु का रंग लाल है। यहाँ 'लाल रंग' उस वस्तु-विशेष का गुण है, किसी और गुण (जैसे रंग) का नहीं। गुण में गति नहीं होती है, वह द्रव्य में निष्क्रिय रूप में समवेत होकर स्थित रहता है।

गुण के प्रकार :→ वैशेषिक दर्शन में चौबीस (२४) प्रकार के गुण होते हैं। परन्तु कुछ लोगों का मत है कि कणाद ने सत्रह (१७) गुणों को ही स्वीकारा है परन्तु कालांतर में सात (७) गुण प्रशस्तपाद के द्वारा संग्रहित किए गए हैं। इस प्रकार से कुल २४ गुण हैं —

रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, द्वेष, प्रयत्न, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, संस्कार, धर्म और अधर्म।

इनमें से कुछ गुणों के अवांतर विभाग भी होते हैं। जैसे —

(i). **रूप (रंग) के प्रभेद →** श्वेत (सफेद), कृष्ण (काला), रक्त (लाल), पीत (पीला), नील (नीला), हरित (हरा), इत्यादि।

(ii). रस के प्रभेद → मधुर (मीठा), अम्ल (खट्टा), लवण (नमकीन),
(2) कटु (कड़ुआ), तिक्त (तीता), कषाय (कसैला)।

(iii). गंध → यह दो प्रकार का होता है – सुगंध और दुर्गन्ध।
(3) इसका प्रत्यक्ष केवल नासिका के द्वारा होता है। इसका निवास स्थान पृथ्वी है। यह अनित्य गुण है।

(iv). शब्द → यह भी एक विशेष गुण है, इसका प्रत्यक्ष ज्ञान सिर्फ
(4) कान से ही होता है। यह दो प्रकार का होता है –
(i) ध्वन्यात्मक और अस्फुट शब्द, जैसे- घंटी या शंख की ध्वनि।
(ii) वर्णनात्मक या स्फुट शब्द। जैसे- 'क' का उच्चारण।

(v). स्पर्श → इसका प्रत्यक्ष केवल त्वचा से होता है। यह 3
(5) (तीन) प्रकार का होता है – उष्ण (गर्म), शीत (ठंडा) और अशीतोष्ण (न ठंडा न गर्म)।

(vi). संख्या → यह एक साधारण गुण है। संख्या पदार्थों का वह
(6) गुण है जिसके कारण हम एक, दो, तीन जैसे शब्दों का व्यवहार करते हैं। एक से लेकर ऊपर तक अनंत संख्याएँ हैं।

(vii). परिमाण → यह वह गुण है जिसके कारण बड़े और छोटे का
(7) भेद दिखाई पड़ता है। यह चार (4) प्रकार का होता है – अणुत्व, महत्व, लम्बाई और ओछापन।

(viii). पृथक्त्व → किसी द्रव्य का वह गुण जिससे वह द्रव्यों से अलग
(8) पहचाना जाता है, 'पृथक्त्व' कहलाता है। यह विशेष से भिन्न है।

(ix). संयोग → दो पृथक् रहने वाले द्रव्यों के मिलने से जो संबंध
(9) होता है, उसे संयोग कहा जाता है। जैसे, हाथ का कलम के साथ संयोग। संयोग तीन (3) प्रकार का होता है –

(1). अन्यतर कर्मज - जहाँ एक द्रव्य आकर दूसरे से मिल जाता है, उसे अन्यतर कर्मज संयोग कहते हैं। जैसे पक्षी उड़कर पहाड़ की चोटी पर आ बैठता है।

(2). उभय कर्मज → जहाँ दोनों द्रव्यों का क्रिया के साथ संयोग होता है, वहाँ उभय कर्मज संयोग होता है। जैसे - दो पहलवान दो तरफ से आकर आपस में भिड़ जाते हैं और,

(3). संयोगज → जब एक संयोग से दूसरा संयोग होता है, तो उसे संयोगज संयोग कहते हैं। जैसे - हमारे हाथ में जो कलम है उससे टेबल का संयोग हो तो हमारे हाथ का साथ टेबल का जो संबंध होता है, उसे 'संयोगज संयोग' कहा जाता है।

(X) - विभाग → विभाग संयोग के विपरीत है। संयोग के अंत या विच्छेद का नाम विभाग है। अर्थात् दो संयुक्त द्रव्यों का अलग हो जाना विभाग है। जैसे - चिड़िया के उड़ जाने से उसका पहाड़ से सम्बन्ध विच्छेद होना। यह तीन प्रकार का होता है -

(i). अन्यतर-कर्मज - जहाँ एक द्रव्य की क्रिया से संयोग का अंत होता है। जैसे पक्षी उड़कर पहाड़ की चोटी पर से चला जाता है।

(ii) उभय-कर्मज - जहाँ दोनों द्रव्यों की क्रिया से विभाग होता है। जैसे, दो पहलवान एक-दूसरे को छोड़कर अलग हो जाते हैं। और

(iii). विभागज - जहाँ एक विभाग से दूसरा विभाग हो जाता है। जैसे, मैं कलम छोड़ देता हूँ तो कागज से भी हाथ का संबंध छूट जाता है।

(XI) → परत्व → इसे दूरत्व भी कहा जाता है। इसके प्रत्यय का आधार दूर से लिया गया है। यह दो प्रकार का होता है -

(a). कालिक - अर्थात् प्राचीनत्व।
(b) दैशिक - अर्थात् दूरत्व।

(XII) → **अपरत्व** → इसका अर्थ है 'निकटता'। यह भी दो प्रकार का होता है –
(12)

(a) कालिक अपरत्व – अर्थात नवीनता।
(b) दैशिक अपरत्व – अर्थात निकटत्व।

(XIII) - **बुद्धि** → वस्तुओं की चेतना को बुद्धि (ज्ञान) कहा गया है। ईश्वर में बुद्धि नित्य है जबकि जीवात्माओं में बुद्धि अनित्य है।
(13)

(XIV) - **सुख** → अनुकूल वेदना को सुख कहा जाता है।
(14)

(XV) - **दुःख** → प्रतिकूल वेदना को दुःख कहा गया है।
(15)

(XVI) - **इच्छा** → किसी वस्तु के प्रति अनुराग को इच्छा कहते हैं।
(16)

(XVII) - **द्वेष** → किसी वस्तु के प्रति विरक्ति को 'द्वेष' कहते हैं।
(17)

(XVIII) - **प्रयत्न** → आत्मा की चेष्टा को 'प्रयत्न' कहा गया है। यह तीन प्रकार का होता है –
(18)

(1) **प्रवृत्ति** - अर्थात किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना।
(2) **निवृत्ति** - अर्थात किसी वस्तु से छुटकारा पाने के लिए यत्न।
(3) **जीवन योनि** - अर्थात प्राण धारण की क्रिया, जैसे- साँस लेना, आदि।

(XIX) → **द्रवत्व** → द्रवत्व वह गुण है जिसके कारण जल, दूध, तेल आदि तरल पदार्थ बहते हैं।
(19)

(XX) - **गुरुत्व** → वस्तुओं का वह गुण जिसके कारण वे नीचे की ओर गिरती हैं 'गुरुत्व' कहा जाता है।
(20)

(XXI) - **स्नेह** → इसका अर्थ 'चिकनापन' है। स्नेह वह गुण है जो पार्थिव कणों को आपस में मिलकर पिंडिभूत करता है। यह गुण केवल जल में पाया जाता है।
(21)

(XXII). **संस्कार** → इससे तात्पर्य है - 'व्यवस्थित करना'। अर्थात संस्कार अतीत जीवन के कर्मों के कारण निर्मित होते हैं। यह तीन प्रकार प्रकार का होता है –
(22)

(1) वेग → जिसके कारण किसी वस्तु में गति होती है।

(2) भावना → जिसके कारण किसी विषय की स्मृति या प्रत्याभिज्ञा (पहचान) होती है। और

(3) स्थिति-स्थापकत्व → जिसके कारण संस्कार, धर्म, अधर्म जैसे कोई भी पदार्थ विक्षोभित होने पर पुनः अपनी पूर्व स्थिति में आ जाता है, जैसे रबड़ का फीता।

(XXIII)- धर्म → विहित कर्मों को करना 'धर्म' है। धर्म से पुण्य का (23) बोध होता है तथा यह सुख का विशेष कारण है।

(XXIV)- अधर्म → निषिद्ध और अहितकर कर्मों से 'अधर्म' की (24) प्राप्ति होती है। अधर्म दुःख का कारण होता है।

इस प्रकार से जीवात्मा धर्म के कारण सुख और अधर्म के कारण दुःख का भोग करती है।

उपर्युक्त वर्णनों के आधार पर वैशेषिक दर्शन में केवल मौलिक गुणों की ही चर्चा की गई है यह पता चलता है। किसी-किसी गुण के कई प्रकार भी होते हैं। इसलिए सिर्फ यहाँ मौलिक गुणों को ही बताया गया है। अतः गुण को पदार्थ के रूप में स्वीकार करते हुए कहा गया है कि, पदार्थ का अर्थ होता है- सत्ता। गुण द्रव्य में रहते हैं, यदि द्रव्य वास्तविक है, तो गुण भी वास्तविक होते हैं। इसलिए पदार्थ रूप में गुण को स्वीकारना अनौचित्य नहीं है।

सूत्र- "रूपरसगन्धस्पर्शाः संख्याः परिमाणानि पृथक्त्वं संयोगविभागौ।
परत्वापरत्वे बुद्धयः सुखदुःखे इच्छाद्वेषौ प्रयत्नाश्च गुणाः ॥ 6 ॥

→ - वैशेषिक सूत्र - 6